गांधी की नई तालीम में सिर्फ साक्षरता केन्द्रित औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था का प्रतिरोध ही समाहित नहीं था बल्कि इसने भारतीय देशज परंपरा में ज्ञान पर ऊंची जातियों के स्थापित हो चुके वर्चस्व को भी चुनौती दी और शिक्षा में शारीरिक श्रम की महत्ता को पुनर्स्थापित करने की पैरवी की। प्रो. कृष्ण कुमार का यह लेख गांधी के शिक्षा चिन्तन और उसकी चुनौतियों का सूक्ष्मता से विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

कृष्ण कुमार

गांधी की नई तालीम

कृष्ण कुमार

जाने-माने शिक्षाविद्, केन्द्रीय शिक्षण संस्थान, दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं।

सम्पर्क

32-ए, छात्रा मार्ग, मोरिस नगर, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007

भारत में उन्नीसवीं सदी के आरंभ में ब्रिटिश प्रशासन द्वारा स्थापित औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था का अस्वीकार, आजादी के लिए संघर्ष से उत्पन्न बौद्धिक उथल-पुथल की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता थी। बहुत-से प्रतिष्ठित भारतीयों, राजनेताओं, समाज सुधारकों और लेखकों ने इस अस्वीकार को अभिव्यक्त किया। लेकिन किसी ने भी इतनी तीक्ष्णता और समग्रता के साथ औपनिवेशिक शिक्षा को अस्वीकृत नहीं किया जितना गांधी ने, न ही किसी ने ऐसी क्रान्तिकारी वैकल्पिक शिक्षा सामने रखी जैसी गांधी ने प्रस्तावित की। गांधी की औपनिवेशिक शिक्षा की आलोचना उनकी पश्चिमी सभ्यता की समग्र आलोचना का हिस्सा थी। औपनिवेशीकरण, अपने शिक्षा के एजेण्डा सहित, गांधी की दृष्टि में सत्य और अहिंसा का निषेध करता था- जिन्हें वे दो सर्वोच्च मूल्य मानते थे। पश्चिमवासियों ने अपनी 'सारी ऊर्जा, उद्योग और उद्यम अन्य प्रजातियों को लूटने और विनाश करने में लगाए हैं' यह तथ्य गांधी के लिए पश्चिमी सभ्यता की 'दुर्दशा' का पर्याप्त प्रमाण था।[1] अतः, उन्होंने सोचा कि यह भारत के लिए 'प्रगति' का ऐसा प्रतीक नहीं हो सकता जो अनुकरणीय अथवा रोपने लायक हो।

औपनिवेशिक शिक्षा के बारे में गांधी की प्रतिक्रिया को पश्चिम से नफरत के तौर

पर समझना गलत होगा। इसे किसी पुनरुत्थानवादी मत के सूक्ष्म लक्षण के रूप में देखना भी उतना ही गलत होगा। यदि गांधी की 'बुनियादी शिक्षा' की योजना को शिक्षा के विश्व-इतिहास में एक अनाम पाठ के रूप में पढ़ना संभव होता तो इसे आसानी से पेस्तोलॉजी, ओवेन, टॉल्सटॉय और डिवी जैसे पाश्चात्य क्रान्तिकारी मानवतावादियों की परंपरा में वर्गीकृत किया जा सकता है। यह रचना स्वयं को पूर्व-पश्चिम के द्विविभाजन के संदर्भ में समझने के लिए नहीं छोड़ती, जिस पर गांधी अपने कुछ अन्य लेखन में विचार करते हैं। फिर भी, यह सच है कि गांधी ऐसी शिक्षा चाहते थे, जो उनके अनुसार सही दिशा में पुनर्गठित हो- जो पश्चिम की विकास की धारणा से भारत को मुक्त करे और जो इसकी जरूरतों के अधिक अनुरूप और ज्यादा माकूल हो। उनके लिए शिक्षा का यह प्रारूप, जो पश्चिमी विकास के मॉडल से विलग था, पूरे विश्व के लिए एक भिन्न दिशा थी।

आदमी बनाम मशीन

गांधी पूर्व-पश्चिम के सुपरिचित द्विभाजन से अलग शैक्षिक विमर्श को प्रारंभ करने में सक्षम हुए, फिर भी उन्होंने शिक्षा की समस्याओं को आदमी बनाम मशीन के भिन्न तर्क से स्थित करते हुए पश्चिम की आलोचना विकसित की। इस तर्क में आदमी केवल भारत ही नहीं, संपूर्ण मानव जाति का प्रतिनिधित्व करता है और मशीन औद्योगीकृत पश्चिम का प्रतिनिधित्व करती है। गांधी ने आजीवन अपने व्यक्तिगत जीवन को तथा जिन सिद्धान्तों के लिए वे लड़े उन्हें वैश्विक सन्दर्भ में देखा। यह दृष्टि उनके जीवन के अन्तिम दशक में भी कम प्रभावी नहीं रही, जबकि उन्होंने उसकी शुरुआत में ही 'बुनियादी शिक्षा' के अपने प्रस्ताव को सामने रख दिया था।[2]

गांधी के प्रस्ताव के केन्द्र में था स्कूल पाठ्यचर्या में उत्पादक दस्तकारी का परिचय। यह दस्तकारी को स्कूल के अनिवार्य विषय के तौर पर प्रस्तुत करने भर का विचार ही नहीं था, बल्कि एक हस्तशिल्प सीखने को संपूर्ण शिक्षण-योजना की धुरी के रूप में रखना था। इसका अर्थ था उस भारत में स्कूली ज्ञान के समाजशास्त्र का आमूलचूल पुनर्गठन, जहां जातियों के पदानुक्रम में उत्पादक दस्तकार्य निम्नतम समूहों से जोड़े जा चुके थे। हस्तशिल्प में उत्पादन की प्रक्रिया का निहित ज्ञान, जैसे कताई, बुनाई, चमड़े का काम, बर्तन बनाना, धातुकर्म, टोकरी बनाना और किताब सिलना आदि; परंपरागत सामाजिक पदानुक्रम में निम्नतम स्तर के विशेष जाति समूहों का एकाधिकार बन चुका था। इनमें से बहुत से 'अछूत' वर्ग का हिस्सा थे। भारत की शिक्षा की देशज परंपरा के साथ ही औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था ऐसे कौशलों (जैसे कि साक्षरता) और ज्ञान पर जोर देती थी, जिस पर उच्च जातियां एकाधिकार रखती थीं। अपनी ज्ञानमीमांसा की शब्दावली में, गांधी का प्रस्ताव शिक्षा व्यवस्था को उसके सिर के बल खड़ा करने की एक योजना थी। इस प्रकार 'बुनियादी शिक्षा' का समाज-दर्शन और पाठ्यचर्या सामाजिक स्तर के सबसे नीचे पायदान पर खड़े बच्चे के पक्ष में थी। इस तरह यह सामाजिक रूपान्तरण के एक कार्यक्रम को इंगित करती थी। यह 'शिक्षा' के प्रतीकात्मक अर्थ को बदलने की कोशिश करता था और, परिणामस्वरूप, शिक्षा के अवसरों की स्थापित संरचना को बदलता था।

गांधी द्वारा स्कूल के लिए प्रस्तावित उत्पादक प्रक्रियाओं का औचित्य वैसा चौंकाने वाला नहीं था जैसी यह व्याख्या है। उनका प्रस्तावित तर्क था, दो वजहों से, कि स्कूलों को, जितना संभव हो, आत्म-निर्भर होना चाहिए। पहली वजह पूरी तरह से आर्थिक थी : यानी कि, एक गरीब समाज अपने सभी बच्चों को तब तक शिक्षा उपलब्ध नहीं करा सकता, जब तक स्कूल अपने संचालन के लिए भौतिक और आर्थिक संसाधनों को न जुटा पाए। दूसरी वजह राजनैतिक थी : केवल आर्थिक आत्म-निर्भरता ही स्कूलों को राज्य पर निर्भरता और इसके हस्तक्षेप से बचा सकती थी। मूल्यों के तौर पर, आत्म-निर्भरता और स्वायत्तता गांधी के दिल के बहुत करीब थे। वे उनकी सत्य और अहिंसा पर आधारित समाज-दृष्टि पर आधारित थे। आर्थिक आत्म-निर्भरता सत्य से और स्वायत्तता अहिंसा से जुड़ी थी। जीवित रहने के लिए उत्पादन की प्रक्रिया में सीधे भागीदारी नहीं करने वाले व्यक्ति अथवा संस्था लम्बे समय तक 'सत्य' का पालन नहीं कर सकते थे। ऐसे व्यक्ति अथवा संस्था को किसी हद तक राज्य पर निर्भर होना ही पड़ेगा, जो किसी-न-किसी तरह हिंसा को जरूरी बना देगा। राज्य की शिक्षा व्यवस्था गांधी की शिक्षा-दृष्टि का विरोध थी। अपने रख-रखाव के लिए स्कूल द्वारा खुद के संसाधनों के विकास की संभावना इस विरोध से बाहर निकलने का एक रास्ता था।

उत्पादक स्कूलों का विचार स्पष्ट रूप से दक्षिण अफ्रीका में गांधी द्वारा स्थापित दो समुदायों से आया था। 1904 में आरंभ फेनिक्स फार्म और 1910 में स्थापित टॉलसटॉय फार्म ने ग्रामीण सह-जीवन की संभावनाओं में गांधी की स्थायी रुचि और भरोसा विकसित किया। इनमें से पहला प्रयोग संभवतः जॉन रस्किन के *अन टू दिस लास्ट* से प्रेरित था। गांधी ने इस किताब से तीन सीख निकालीं, अथवा जैसा लुई फिशर ने व्याख्या की है, गांधी ने इस किताब से तीन महत्त्वपूर्ण संदेश समझे।[3] पहला संदेश था कि अच्छी अर्थव्यवस्था वही है जो सभी के भले के लिए हो; दूसरा संदेश था कि हाथ के काम से कमाई, (जैसे कि एक नाई का काम) मानसिक कार्य के समान ही मूल्य रखती है (जैसे कि वकील का कार्य); और तीसरा संदेश था कि एक मजदूर अथवा दस्तकार का जीवन ही असल में जीने लायक जीवन है। गांधी अपनी आत्मकथा में याद करते हैं कि

रस्किन की किताब को रेल यात्रा में पढ़ चुकने के बाद उन्होंने इन संदेशों को यथाशीघ्र व्यवहार में लाने का निर्णय किया।

जिस तरह के जीवन को गांधी की 'बुनियादी शिक्षा' का प्रस्ताव जिस तरह के जीवन को 'बेहतर' जीवन के रूप में सामने रखता है, उनके द्वारा पहली बार फेनिक्स फार्म में और कुछ समय बाद, ज्यादा कठोरता और महत्त्वाकांक्षा के साथ टॉल्सटॉय फार्म में, व्यवहार में लाया गया। जैसा कि यह नाम संकेत करता है, इस बाद के प्रयोग के समय तक, गांधी रूस के लेखक और विचारक लेव टॉल्सटॉय को पढ़ चुके थे और उनसे संपर्क स्थापित भी कर चुके थे। टॉल्सटॉय से गांधी ने जो प्रेरणा ली, वह रुचियों और सरोकारों का एक वृहद विस्तार थी। मानव समाज में हिंसा के स्रोतों से लड़ना उन दोनों के लिए प्रमुख था। टॉल्सटॉय व्यक्ति के शांति और स्वतंत्रता से जीने के अधिकार के हिमायती थे और हर प्रकार के उत्पीड़न का उनका निषेध, उन्हें गांधी के करीब लाया। हालांकि गांधी ने टॉल्सटॉय के शिक्षा पर लेख *यास्नाया पोल्याना* पत्रिका में नहीं पढ़े थे, टॉल्सटॉय के विचार जैसे कि गांधी द्वारा ही कहे गए हों कि 'शिक्षा को निश्चित, सुविचारित स्वरूपों में मानवों को ढालने की प्रक्रिया के रूप में देखना निष्फल, अनैतिक और असंभव भी है'[4]।

गांधी के प्रस्ताव के केन्द्र में था स्कूल पाठ्यचर्या में उत्पादक दस्तकारी का परिचय। यह दस्तकारी को स्कूल के अनिवार्य विषय के तौर पर प्रस्तुत करने भर का विचार ही नहीं था, बल्कि एक हस्तशिल्प सीखने को संपूर्ण शिक्षण-योजना की धुरी के रूप में रखना था। इसका अर्थ था उस भारत में स्कूली ज्ञान के समाजशास्त्र का आमूलचूल पुनर्गठन, जहां जातियों के पदानुक्रम में उत्पादक दस्तकार्य निम्नतम समूहों से जोड़े जा चुके थे।

गांधी की शैक्षिक योजना में स्कूल की दैनिक पाठ्यचर्या के संदर्भ में शिक्षक के लिए स्वायत्तता का अधिकार स्वतंत्रतावादी सिद्धान्तों से संगत है, जिसे टॉल्सटॉय भी मानते थे। गांधी भारतीय शिक्षक को नौकरशाही की दासता से मुक्त कराना चाहते थे। औपनिवेशिक शासन के अधीन स्कूल शिक्षक के पेशे का अर्थ था- पाठ्यपुस्तकों में नौकरशाही द्वारा चयनित ज्ञान के प्रकार और विषयवस्तु को प्रसारित और स्पष्ट करना। पाठ्यपुस्तकों के अनिवार्य प्रयोग और शिक्षक की कमजोर स्थिति के बीच के संबंध का खुलासा करते हुए गांधी ने लिखा है, 'यदि पाठ्यपुस्तकें शिक्षा के वाहन के रूप में इस्तेमाल होती हैं, तो शिक्षक के जीवन्त शब्दों का मूल्य बहुत कम रह जाएगा। जो शिक्षक पाठ्यपुस्तकों से पढ़ाता है वह अपने शिष्यों में मौलिकता पैदा नहीं कर पाएगा।'[5] गांधी की बुनियादी शिक्षा की योजना में,निर्धारित पाठ्यचर्या और पाठ्यपुस्तकों से शिक्षक की अधीनता को समाप्त करना था। इसने सीखने की ऐसी अवधारणा को प्रस्तुत किया, जिसे पूरी तरह पाठ्यपुस्तकों से लागू नहीं किया जा सकता था। इससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण था बुनियादी शिक्षा की योजना में पाठ्यचर्या से संबंधित मसलों पर शिक्षक को प्राप्त स्वतंत्रता और सत्ता। यह एक उदारतावादी योजना थी क्योंकि यह कक्षा में शिक्षक को सीधे-सीधे क्या करना चाहिए, इसे तय करने की राज्य की सत्ता का निषेध करती थी। उनके व्यापक सामाजिक जीवन-दर्शन और राजनीति के अनुरूप, गांधी की शैक्षिक योजना का यह आयाम प्रभावशाली रूप से राज्य की सत्ता के वृत को कम करता था।

आत्म-निर्भरता

गांधी की योजना की अवधारणात्मक रूपरेखा जुटाने के बाद, अब हम इसके केन्द्रीय सरोकारों की ओर लौट सकते हैं और इन्हें ज्यादा गहराई से परख सकते हैं। बुनियादी शिक्षा गांधी के एक आदर्श समाज की संकल्पना का हिस्सा थी जो छोटे और आत्म-निर्भर समुदायों से मिलकर बनता हो। उनके लिए, भारतीय गांव ऐसे समुदायों के रूप में विकसित होने में सक्षम थे और वास्तव में वे यकीन करते थे कि भारतीय गांव ऐतिहासिक रूप से आत्म-निर्भर थे और वर्तमान में बड़ा काम था- उनकी स्वायत्तता और आर्थिक आत्म-निर्भरता के लिए जरूरी स्थितियां और राजनैतिक गरिमा को पुनःस्थापित करना। वे सोचते थे कि औपनिवेशिक शासन ने गांव की अर्थव्यवस्था को शहरवासियों के दोहन के अधीन बनाकर बर्बाद कर दिया है। औपनिवेशिक शासन से मुक्ति का अर्थ गांव का सशक्तिकरण और

इसका स्व-निर्भर समुदाय के रूप में विकास होना होगा। बच्चों को उत्पादक कार्यों का प्रशिक्षण देकर और सहयोग पर आधारित समुदाय में रहने के लिए सहायक अभिवृत्तियों और मूल्यों को प्रदान करके बुनियादी शिक्षा की योजना इस तरह गांव के विकास के लिए अभिप्रेत थी।

विकास का यह कार्यक्रम गांधी की उस दृष्टि में समाहित था जो मानव के मानसिक स्वास्थ्य के लिए औद्योगीकरण को खतरे के रूप में मानती थी। तकनीक के बारे में गांधी के 'वास्तविक' विचार पर बहुत बहस हुई है। यह साफ नहीं है कि आधुनिक विज्ञान और तकनीक की भावना का उनका विरोध पश्चिमी प्रकार की उस आधुनिकता तक सीमित था जिसमें विज्ञान और तकनीक को गैर-यूरोपीय समाजों के शोषण के लिए इस्तेमाल में लाया गया। उनकी संकलित रचनाओं में दोनों तरह के प्रचुर उदाहरण मिलते हैं। शायद इस मसले (और बहुत से अन्य) में गांधी में आर या पार का मत देखना शायद गलत है। वे कर्म को सिद्धांत देने वालों में नहीं थे, वे ऐसे व्यक्ति थे जो हमेशा प्रतिक्रिया देने और कर्म करने के लिए तैयार थे। पहले प्रतीकात्मक प्रारूप बनाकर फिर कर्म के लिए तैयार होना, यह उनका तरीका नहीं था। विज्ञान और औद्योगीकरण के संदर्भ में, उन्होंने भारत के पूंजीवाद और औद्योगिक विकास की दिशा में प्रयाण को कम करने की दिशा में प्रयास किया। वे चाहते थे कि भारत पहले सामाजिक और राजनैतिक रूप से विकास करे, इसके बाद ही सत्ता के विकल्पों को व्यवहार में लाने की स्थिति में आएगा तथा तकनीकी व औद्योगीकृत पश्चिम की बाजारवादी ताकतों और भारतीय समाज की पूंजीवादी लॉबी की ओर से आने वाले दबावों का सामना कर पाएगा।

गांधी की बुनियादी शिक्षा की योजना में, निर्धारित पाठ्यचर्या और पाठ्यपुस्तकों से शिक्षक की अधीनता को समाप्त करना था। इसने सीखने की ऐसी अवधारणा को प्रस्तुत किया, जिसे पूरी तरह पाठ्यपुस्तकों से लागू नहीं किया जा सकता था। इससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण था बुनियादी शिक्षा की योजना में पाठ्यचर्या से संबंधित मसलों पर शिक्षक को प्राप्त स्वतंत्रता और सत्ता। यह एक उदारतावादी योजना थी क्योंकि यह कक्षा में शिक्षक को सीधे-सीधे क्या करना चाहिए, इसे तय करने की राज्य की सत्ता का निषेध करती थी।

उनके कार्यक्रम को वरीयताओं के कालक्रम में समझा जा सकता है, जिनमें जीवनक्षम राजनैतिक व्यवस्था का गठन पहले आएगा और मशीनों के उपयोग के जरिए उत्पादक प्रक्रियाओं का विकास दूसरे स्थान पर। गांधी के अनुसार, भारत के लिए एक स्व-निर्भर राजनैतिक व्यवस्था ग्राम गणतत्रों में 'महासागरीय वलयों' की भांति संगठित होगी। इस रूपक का आशय था स्थानीय सत्ता के गठन का सिद्धांत जो कि वृहत्तर समाज के लिए प्रतिबद्धता के भीतर कार्य करे। वे आधुनिकीकरण के उत्पादन के साधनों से पहले गांव में रहने वाली व्यापक जनता के लिए एक ऐसी राजनैतिक व्यवस्था का विकास चाहते थे, जो आधुनिकीकरण के दबावों में अपने हितों को सुरक्षित रख पाने में शक्तिहीन न रह जाए।[6] उनकी शैक्षिक योजना इन प्राथमिकताओं के क्रम में अच्छी तरह उपयुक्त बैठती है। यदि औद्योगीकरण का आगमन धीमा किया जा सके और उसे राजनैतिक और सामाजिक प्रगति की योजना के अनुरूप गढ़ा जा सके तो बुनियादी शिक्षा ऐसी प्रगति में निश्चित मकसद को पूरा कर सकती है। खासतौर से, यदि उद्देश्यपूर्ण औद्योगीकरण का अर्थ है बड़े पैमाने पर मशीनीकृत व्यवस्थाओं में प्रतिद्वंद्विता के बिना गांव जो उत्पादन कर सकते हैं, उसका अधिकार उन्हें देना, तो बुनियादी शिक्षा गांव के बच्चों की उत्पादक क्षमताओं में ऐसी योजना के तहत वृद्धि कर सकती है।

गांधी के यूटोपिया में एक आदर्श नागरिक छोटे समुदायों में रहने वाला मेहनती, आत्म-सम्मान युक्त और उदार व्यक्ति है। यह छवि उनकी शिक्षा योजना की तह में भी थी। आदमी की यह छवि और उत्पादन व्यवस्था जो उसे स्थापित करे, अमेरिका के दार्शनिक जॉन डिवी (1859-1952) की याद दिलाती है और इन दो समकालीनों की शैक्षिक दृष्टियों की समानताओं की पड़ताल उपयोगी है। डिवी ऐसे देश में बड़े हुए, जिसकी सरहदें तब तक विकासमान थीं। कारीगरों के छोटे समुदाय, कठोर परिश्रमी पुरुष और महिलाएं, जिसका हर एक व्यक्तित्व समुदाय के लिए महत्त्व रखता था, डिवी के युवाकाल में एक आदर्श लोकतांत्रिक इकाई प्रतीत होती थी। विकासमान

पूंजीवादी अर्थव्यवस्था ने उस मांग को अभी तक प्रकट नहीं किया था जो आगे चलकर वह राजनीति व संस्कृति से करने वाली थी। 1916 में प्रकाशित उनकी प्रसिद्ध पुस्तक *डेमोक्रेसी एण्ड एज्युकेशन* में डिवी ने शिक्षण के कर्म-आधारित प्रारूप को जिम्मेवार व्यक्तियों के आदर्श छोटे समाज में स्थापित किया था। उत्पादक कार्य को शिक्षा से जोड़ना गांधी के प्रारूप के केन्द्र में भी था और यह उनके आदर्श गणतंत्र गांव के यूटोपिया में गहरे जमा था जो कि डिवी से बहुत भिन्न नहीं था। लेकिन क्योंकि डिवी ने कुछ बाद में अपने लोकतांत्रिक समुदाय की रूपरेखा तैयार की जब कि उनके देश का विकास पूंजीवाद के रास्ते पर चल पड़ा था, गांधी ने उस वक्त अपने आदर्श ग्राम-समुदाय की रूपरेखा बनाई जब वे सोचते थे कि अब भी विकल्पों के चुनाव के लिए वक्त था। इसके अलावा, डिवी की योजना परंपरागत हस्तशिल्प आधारित उत्पादन-प्रक्रियाओं पर उतनी निर्भर नहीं थी, जितनी गांधी की थी। हालांकि दोनों ही आरंभिक पूंजीवादी विकास की विशेषताओं की पैदाइश थे। मुड़कर देखने पर, डिवी के शैक्षिक प्रस्ताव को पूंजीवादी विकास के अमानवीय फैलाव के बीच बच्चों के लिए खास स्थान सुरक्षित करने की अपील के तौर पर पढ़ा जा सकता है। दूसरी तरफ, गांधी का प्रस्ताव पूंजीवाद के विकास को धीमा करने की अपील के रूप में पढ़ा जा सकता है ताकि महिलाओं और पुरुषों को मशीनों के साथ जीने से पहले उनकी क्षमताओं को बढ़ाने के लिए समय मिल पाए।

बुनियादी शिक्षा गांधी के एक आदर्श समाज की संकल्पना का हिस्सा थी जो छोटे और आत्म-निर्भर समुदायों से मिलकर बनता हो। उनके लिए, भारतीय गांव ऐसे समुदायों के रूप में विकसित होने में सक्षम थे और वास्तव में वे यकीन करते थे कि भारतीय गांव ऐतिहासिक रूप से आत्म-निर्भर थे और वर्तमान में बड़ा काम था- उनकी स्वायत्तता और आर्थिक आत्म-निर्भरता के लिए जरूरी स्थितियां और राजनैतिक गरिमा को पुनःस्थापित करना।

यदि हम गांधी और डिवी की तुलना को एक कदम आगे ले जाएं तो हम इन दो शिक्षाविदों की एक अन्य समानता को खोज पाएंगे : दोनों ने पूरी तरह धर्मनिरपेक्ष शिक्षणशास्त्र का प्रचार किया। वस्तुतः, गांधी के मामले में यह कुछ चौंकाने वाला हो सकता है, क्योंकि; शिक्षा के अलावा कर्म के हर क्षेत्र में गांधी ने गहन धार्मिक भावना वाले आदमी की तरह व्यवहार किया। शिक्षा के संदर्भ में भी वे खुद को पूरी तरह धर्मनिरपेक्ष स्थिति से प्रतिबद्ध करने के प्रति अनिच्छुक प्रतीत होते थे, लेकिन फिर भी यह सही है कि उनकी बुनियादी शिक्षा योजना धार्मिक शिक्षा के लिए किसी तरह का स्थान प्रदान नहीं करती। जून 1938 में इस विषय पर उन्होंने कुछ विस्तार के साथ स्पष्टीकरण दिया क्योंकि शिक्षाविदों के एक प्रतिनिधि मंडल ने इस विषय पर स्पष्ट रूप से उनके विचार जानने की मांग की थी। उनका जबाव था :

''हम वर्धा की शिक्षा योजना से धर्म के शिक्षण को बाहर कर चुके हैं क्योंकि हमें डर है कि आज जिस तरह धर्मों को पढ़ाया या व्यवहार में लाया जाता है, वे एकता की बजाय टकराहट की तरफ ले जाते हैं। लेकिन, दूसरी तरफ, मैं मानता हूं कि सभी धर्मों के समान सत्यों को सभी बच्चों के लिए पढ़ाया जा सकता है और पढ़ाया जाना चाहिए। ये सत्य शब्दों या पुस्तकों के जरिए नहीं पढ़ाए जा सकते- बच्चे इन सत्यों को केवल शिक्षक के दैनिक जीवन के माध्यम से सीख सकते हैं। यदि शिक्षक खुद सत्य और न्याय के सिद्धान्तों पर जीता है, केवल तभी बच्चे सीख सकते हैं कि सत्य और न्याय सभी धर्मों का आधार हैं।[7]''

ऐसा प्रतीत होता है गांधी ने अपने मन में शिक्षा की धार्मिक भूमिका, जिसमें वे विश्वास करते थे और बुनियादी शिक्षा के धर्मनिरपेक्ष कार्यक्रम के मध्य के द्वंद्व को निपटाने के लिए शिक्षक की नैतिक छवि का सहारा लिया था। यह पैरवी करते हुए कि शिक्षक सभी धर्मों के बुनियादी सत्यों का, जो कि समान हैं, व्यवहार करते हुए संप्रेषित कर सकता है, निश्चित रूप से गांधी असाधारण मांग कर रहे थे। यह बात गौण है कि इस मांग की व्यावहारिक असंभावना ने उन्हें परेशान किया या नहीं। संभवतया नहीं, वे साधारण लोगों की सीमाओं- शारीरिक, बौद्धिक अथवा नैतिक- को अनदेखा करने के अभ्यस्त थे और यह सच है कि राजनीति में सक्रिय एक महान शिक्षक की तरह उन्होंने बहुत से साधारण लोगों को असाधारण चीजें करने के काबिल बनाया। दर्ज करने लायक एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षक के आचरण में नैतिक सचाई की दैनिक मिसाल की मांग करते हुए वे शिक्षक

की भूमिका पेशेवर के विपरीत धार्मिक को चुन रहे थे। गांधी एक परिचित भारतीय गुरु छवि द्वारा अपने शिष्यों के साथ आश्रम में रहने का इस्तेमाल कर रहे थे। एक आदर्श आश्रम समुदाय में शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह एक मूल्यवान जीवन की मिसाल कायम करे और दैनिक जीवन के इस उच्च पायदान पर वह विद्यार्थियों से किसी भी तरह के संभव त्याग की मांग करने का अधिकारी था। यह अर्ध-मिथकीकृत छवि शिक्षा में सुधार के लिए गांधी की अपील में बुनियादी शिक्षा के प्रस्ताव में योगदान देने वाली एक महत्त्वपूर्ण वाग्मिता प्रतीत होती है। इसने शिक्षा की आधुनिक अवधारणा और शिक्षणशास्त्र को भारतीय परंपरा के आभामंडल में स्थान देने का कार्य किया।

विरोध

हालांकि, यह शालीन रणनीति बुनियादी शिक्षा को आक्रमणों, उदासीनता और निर्बलीकरण से बचा नहीं सकती थी, जिनके आरंभ से ही इस पर प्रहार रहे। गांधी का प्रस्ताव जिस विरोध से जूझा, उसे भारत के स्वाधीनता के राजनैतिक संघर्ष के अन्तिम दशकों से अलग नहीं किया जा सकता। उत्तर भारत के मुस्लिम लीग के नेताओं ने बुनियादी शिक्षा को 'हिन्दू छल' के रूप में वर्णित किया। इन आलोचकों ने गांधी की योजना के धर्मनिरपेक्ष चरित्र को नजरअंदाज किया। दूसरी तरफ, उन्होंने गांधी के प्रस्ताव के साथ-साथ घटित होने वाली एक अन्य योजना पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया, जिसकी कुछ विशेषताएं इसके समान थीं। यह दूसरी योजना मध्य प्रांत में रविशंकर शुक्ल ने *विद्या मंदिर* के नाम से आरंभ की थी, जिसका शाब्दिक अर्थ 'ज्ञान का मंदिर' था। इस योजना के तहत शुक्ल ग्रामीण विद्यालय शुरू करना चाहते थे और इससे भी अधिक, उनके व्यक्तित्व में उदारतावादी, धर्मनिरपेक्ष तत्वों के अभाव ने उसे आक्रमण के लिए संवदेनशील बनाया। यह विशुद्ध लाक्षणिक तर्क था जिसने गांधी के मूल प्रस्ताव को आक्रमण के लिए घेरा। राज्य नीति के परिप्रेक्ष्य के तहत बुनियादी शिक्षा पर विचार विमर्श के लिए केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद् द्वारा गठित एक समिति के सदस्यों सहित इस आक्रमण के लिए काफी अधिक श्रोता प्राप्त हुए।[8]

एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षक के आचरण में नैतिक सचाई की दैनिक मिसाल की मांग करते हुए वे शिक्षक की भूमिका पेशेवर के विपरीत धार्मिक को चुन रहे थे। गांधी एक परिचित भारतीय गुरु छवि द्वारा अपने शिष्यों के साथ आश्रम में रहने का इस्तेमाल कर रहे थे। एक आदर्श आश्रम समुदाय में शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह एक मूल्यवान जीवन की मिसाल कायम करे और दैनिक जीवन के इस उच्च पायदान पर वह विद्यार्थियों से किसी भी तरह के संभव त्याग की मांग करने का अधिकारी था। यह अर्ध-मिथकीकृत छवि शिक्षा में सुधार के लिए गांधी की अपील में बुनियादी शिक्षा के प्रस्ताव में योगदान देने वाली एक महत्त्वपूर्ण वाग्मिता प्रतीत होती है।

दूसरा परिप्रेक्ष्य, जिससे गांधी की योजना को संदेह और आलोचना मिली वह था- भारत में औद्योगिक विकास के लिए कार्यनीति। बुनियादी शिक्षा का प्रस्ताव कांग्रेस पार्टी द्वारा बनाई राष्ट्रीय योजना समिति के गठन के साथ-साथ अस्तित्व में आया। राष्ट्रीय योजना समिति का खास मकसद स्वाधीनता के बाद 'आर्थिक पुनरुत्थान' के उद्देश्य के साथ भारत के औद्योगीकरण के लिए योजना बनाना था। इसके अध्यक्ष, जवाहर लाल नेहरू, लम्बे समय से यह विश्वास करते थे कि केवल व्यापक स्तर पर औद्योगीकरण ही भारत की गरीबी और बेरोजगारी की समस्या का समाधान कर सकता है। लेकिन, नेहरू के स्वयं के विश्वासों के अलावा, राष्ट्रीय योजना समिति की विकास के विभिन्न वृत्तों पर रिपोर्टों में, ताकतवर और उदीयमान उद्योगपतियों के वर्ग और राजनीति में उनके समर्थक तथा विभिन्न क्षेत्रों में- विज्ञान एवं तकनीक सहित- उच्च योग्यता रखने वाले बुद्धिजीवियों की दृष्टि झलक रही थी।

राष्ट्रीय योजना समिति की रिपोर्टों में केन्द्र से नियंत्रित अर्थव्यवस्था और बड़े स्तर के उद्योगों के तीव्र विस्तार की योजना मुश्किल से ही गांधी को खुश कर सकती थी। वे समिति की बैठकों और कार्य की खबरों से नाखुश थे और ऐसा उन्होंने व्यक्त भी किया। गांधी और समिति के विचारों में मतभेद राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में व्यापक

औद्योगीकरण की भूमिका और अनुपात तक ही सीमित नहीं था, बल्कि यह औद्योगिक विकास के पीछे मौजूद तर्क था। भारत की भौतिक समृद्धि के अलावा समिति की रिपोर्टों ने भी भारी उद्योगों की वृद्धि के लिए भारत की सुरक्षा को मुख्य तर्क के रूप में उपयोग किया। पश्चिम की भांति सैन्यीकरण और विकास को हाथ में हाथ डालकर चलना था। यह संबद्धता गांधी को खुश करने वाली उल्लसित वाग्मिता तो नहीं ही कही जा सकती थी।

राष्ट्रीय योजना समिति की सामान्य और तकनीकी शिक्षा पर बनी उपसमिति ने इस द्वंद्व को मान्यता नहीं दी, क्योंकि शायद व्यापक अवधारणात्मक मसलों पर शिक्षा के संदर्भ में बातचीत करना अनिवार्य नहीं था। लेकिन उपसमिति की रिपोर्ट ने गांधी द्वारा मौजूदा व्यवस्था से सुझाए परिवर्तन को प्रस्तावित करने में भारी अनिच्छा दर्शाई। यह तर्क दिया गया कि 1938 से कांग्रेस मंत्रालयों के अधीन प्राथमिक स्कूलों की कार्यक्षमता में अप्रत्याशित बेहतरी आ चुकी है (इस दावे के समर्थन में दिए गए आंकड़े बम्बई तक सीमित थे)। रिपोर्ट कहती है, 'इसलिए इस बहाव को बुनियादी शिक्षा के पक्ष में हटाना गलत होगा। बुनियादी शिक्षा की शुरुआत, जो भी आरंभिक शिक्षा संभव हो पाए, उस पर प्रत्यारोपित करने की प्रक्रिया होनी चाहिए।'[9] निश्चिय ही, उपसमिति बुनियादी शिक्षा की वर्धा योजना में गंभीर समस्याएं देखती थी। इसमें मुख्य समस्या उत्पादक कौशलों के शिक्षण को दिए गए महत्त्व से थी। इसके विरोध में उपसमिति का तर्क था कि 'व्यवसाय पर अत्यधिक जोर ऐसी उम्र में आध्यात्मिक रूप से हानिकारक है और सामान्य विषयों का ऐसे अकेले संकीर्ण जरिए द्वारा शिक्षण विषय के ज्ञान को सतही और दोषपूर्ण बनाता है'।[10] दूसरा मुख्य विरोध इस पहले से संबंधित था। उपसमिति को यह विचार स्वीकार्य नहीं था कि स्कूल में बच्चों के काम का उत्पादन स्कूल को वित्तीय रूप से सक्षम बनाएगा। रिपोर्ट कहती है, किसी हद तक ऐसी व्यवस्था का मतलब स्कूलों में बाल श्रम की मौजूदगी होगा'।[11]

ये सुपरिचित तर्क थे और वे राष्ट्रीय योजना समिति के सामान्य परिप्रेक्ष्य से संगत थे। आरंभिक शिक्षा के लिए एक व्यापक उदारवादी पाठ्यचर्या और तकनीकी शिक्षा के लिए सुविधाओं का विस्तार प्रस्तावित योजना के मुख्य रुझान थे। अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के लिए वित्तीय जिम्मेदारी राज्य के लिए नियत की गई। वस्तुतः यह आधुनिक सोच का मुख्य उत्पाद था, जिसकी तुलना में गांधीवादी विचार पुराने और रूढ़िवादी दिखाई दिए। गांधी के यूटोपिया में ग्राम गणतंत्रों को प्रचुर स्वायत्तता तथा आरंभिक उत्पादन-प्रक्रियाओं पर आधारित जीवन के सादे मानदण्डों का लाभ मिलता। लेकिन आधुनिकतावादी यूटोपिया में एक सशक्त केन्द्रीय राज्य द्वारा सभी के लिए जीवन के उच्च मानदण्डों हेतु औद्योगिक सुविधाओं के निर्माण को प्रमुखता दी गई। राज्य द्वारा समर्थित व्यवस्थाओं में आरंभिक विद्यालयीकरण के लिए एक उदारवादी पाठ्यचर्या आधुनिकतावादी दृष्टि का हिस्सा थी। ऐसी व्यवस्था की शिक्षाशास्त्रीय मजबूतियां नेहरू ने अपने शिक्षा पर कुछ चिंतनों में से एक में संक्षेप में उल्लिखित की थीं जो कि भारत एक खोज में 'कांग्रेस और उद्योग' शीर्षक के उप-अध्याय के अंत में स्थित है :

> *अब इसे भली-भांति पहचान लिया गया है कि बच्चे की शिक्षा अनिवार्य रूप से कुछ हस्तशिल्प अथवा शारीरिक गतिविधि से संबंधित होनी चाहिए। इसके फलस्वरूप दिमाग उद्दीप्त होता है और इससे दिमाग और हाथों के बीच गतिविधियों में समन्वय होता है। उसी तरह विकासमान लड़के या लड़की का दिमाग मशीन के द्वारा उद्दीप्त होता है। यह मशीन के प्रभाव में विकसित होता है (निश्चित ही, उचित स्थितियों के तहत एवं फैक्ट्री में एक शोषित और अप्रसन्न मजदूर की तरह नहीं) तथा नए क्षितिजों को खोलता है। सामान्य वैज्ञानिक प्रयोग, सूक्ष्मदर्शी में झांकना और प्रकृति की सामान्य घटनाओं की व्याख्या अपने साथ उत्तेजना, जीवन की प्रक्रियाओं की कुछ समझ तथा प्रयोग की इच्छा लाती है और बंधे-बंधाए वाक्यों तथा फार्मूलों पर भरोसे के बजाय खोजने की प्रवृत्ति पैदा होती है। आत्म-विश्वास और सहयोग की भावना विकसित होती है तथा अतीत के प्रदूषण से उत्पन्न कुंठा कम होती है। हमेशा परिवर्तनशील और उन्नत मशीनी तकनीकों पर आधारित एक सभ्यता इस ओर जाती है। ऐसी एक सभ्यता परिवर्तन को चिह्नित करती है, पुरातन प्रकारों से लगभग एक छलांग लगाती है और ये आधुनिक औद्योगीकरण से अंतरंग रूप से संबंधित है।*[12]

यहां शायद ही संदेह किया जा सकता है कि जब नेहरू इन शब्दों को लिख रहे थे तब वे बुनियादी शिक्षा की योजना पर गांधी के साथ संवाद कर रहे थे। वे बुनियादी शिक्षा में निहित मुख्य शिक्षाशास्त्रीय मान्यता पर सहमति से आरंभ करते हैं, अर्थात् शारीरिक गतिविधि अथवा हस्तशिल्प बच्चे के मन को उद्दीप्त करता है। इसके बाद वे हस्तशिल्प और मशीन के बीच की सादृश्यता की ताकत से दूसरे तर्क पर चले जाते हैं जो बुनियादी शिक्षा में अन्तर्निहित मुख्य आर्थिक मान्यताओं को बिना पहचाने चुनौती देता है। दो वाक्यों के बाद गांधी के प्रस्ताव के साथ संवाद का प्रस्थान बिन्दु वैज्ञानिक प्रयोगों के शिक्षाशास्त्रीय मूल्य और ऐसे प्रयोगों के औद्योगिक सभ्यता से संबंध में बदल जाता है। निश्चित ही, नेहरू इस संबंध को सही रूप में उद्घाटित करते हैं और उस व्यापक भूमिका पर जोर देते हैं जो

विज्ञान का एक प्रयोग आधारित शिक्षाशास्त्र भारत में शिक्षा को दे सकता है। उन्होंने ऐसे नवजीवन की उम्मीद को उन बहुत-से भारतीय बुद्धिजीवियों के साथ साझा किया था जो तीव्र आधुनिकीकरण के लिए प्रतिबद्ध थे और जिन्होंने गांधी की शैक्षिक योजना को अस्वीकार्य पाया। उनमें से एक जाने-माने उपन्यासकार मुल्कराज आनन्द थे जिन्होंने स्वाधीनता के वक्त प्रकाशित अपनी पुस्तक 'ऑन एज्युकेशन' में लिखा था :

> *खादी और अहिंसा पर आधारित अच्छे अल्प दिमागों को पूर्णता से विकसित करने का सपना, जिसमें ये अल्प-बुद्धि अपने आत्म-निर्भर समुदायों की सीमाओं में निष्क्रियतापूर्वक जीवन बिताएं, न केवल भारत में असंभव है, जहां प्रत्येक गांव पहले से ही विदेशी और देशज पूंजीपतियों द्वारा सस्ते मशीन निर्मित उत्पादों से भरा पड़ा है, बल्कि इस सपने से उन सभी गुणों के ठीक विपरीत गुण पैदा होने वाले हैं जिन्हें महात्मा एक आम भारतीय में देखना चाहते हैं।*[13]
>
> स्पष्ट रूप से, आधुनिकतावादी दृष्टिकोण से, गांधी की योजना भारत को पिछड़ेपन की ओर ले जाने का निमंत्रण थी। इसके अलावा, वे यकीन करते थे कि बच्चों की शिक्षा का आधुनिकीकरण (आरंभिक स्कूलों में सूक्ष्मदर्शी प्रदान करने की हद तक) निकट भविष्य में उपलब्ध संसाधनों की मदद से हासिल किया जा सकता है।

क्रियान्वयन

गांधी की शिक्षा योजना पर सभी प्रतिक्रियाएं विरोधी नहीं थीं। बहुत से प्रख्यात शिक्षकों ने बुनियादी शिक्षा का स्वागत किया और उन्होंने इसके क्रियान्वयन के लिए व्यापक कार्यक्रम तैयार किया। जैसा कि उम्मीद की जा सकती है, जिन तरीकों से गांधी के विचार को व्याख्यायित किया गया, उनमें भारी भिन्नता थी। एक छोर पर वे शिक्षक और नेता थे जो इस योजना को पेस्तोलॉजी और डिवी जैसे विचारकों से संबंधित प्रगतिशील शैक्षिक विचार के संदर्भ में समझते थे, तो दूसरे छोर पर वे थे जिन्होंने गांधी के विचारों को अक्षरशः बुनियादी शिक्षा को एक रूढ़िवादी विषय के तयशुदा फरमान की तरह देखा। फिर भी यह सच्चाई है कि गांधी के प्रस्ताव की व्याख्या में इस भारी अन्तर के बावजूद और कल्पनीय प्रशासनिक तथा वित्तीय समस्याओं के बावजूद, बुनियादी स्कूलों की योजना स्वाधीनता के बाद देश के अनेक भागों में बड़े पैमाने पर क्रियान्वित की गई। इस एक बड़े क्रियान्वयन को पीछे मुड़कर एक बड़ी असफलता के रूप में देखना एक रिवाज बन गया है, पर यदि इसे ऐतिहासिक परिस्थितियों की रोशनी में परखा जाए तो यह निष्कर्ष विशेष रूप से दमदार प्रतीत नहीं होता। लेकिन, यह एक दूसरी कहानी है। केवल एक तथ्य जिसे यहां दर्ज किया जाना चाहिए वह यह कि गांधी की योजना का क्रियान्वयन 1960 के 'विकास दशक' में जीवित नहीं रह सका जब भारतीय अर्थव्यवस्था और इसकी राजनीति एक नई अवस्था में प्रवेश कर गई, जिसका लक्षण था भारतीय कृषि का पश्चिम की विकसित अर्थव्यवस्थाओं द्वारा भेदन तथा सत्ता का केन्द्रीकरण। ◆

टिप्पणियां

1. M. K. Gandhi, *The problem of education,* p. 164, Ahmedabad, Navajivan, 1962
2. बुनियादी शिक्षा पर गांधी के भाषणों और लेखों के संग्रह के लिए देखें, *Educational reconstruction,* Wardha, Hindustan Talimi Sangh, 1938, 22 अक्टूबर 1937 में गांधी के वर्धा सम्मेलन में भाषण के लिए देखें, T. S. Avinashilingam, Gandhiji's Experiments in Education, Delhi, Ministry of Education, 1960.
3. Louis Fischer, *The life of Mahatma Gandhi,* London, Granada, 1982 (पहला प्रकाशन 1951).
4. Leo Tolstoy, *Tolstoy on education,* p. 111, Chicago, University of Chicago Press, 1968.
5. हरिजन में, 9 सितम्बर 1939.
6. 1938 में नागपुर में अतिथि अध्यापक अर्थशास्त्रियों के समूह के लिए दिये गये गांधी के भाषण के लिए देखें, *The collected works of Mahatma Gandhi,* vol. 68, p. 258, Ahmedabad, Navajivan, 1977.
7. M. K. Gandhi, *Documents on Social, moral and spiritual values in education,* p. 20, New Delhi, NCERT, 1979.
8. Bureau of Education, *Post-war educational development in India,* 3rd ed., Delhi, Manager of Publications, 1944. (report of Central Advisory Board of Education.)
9. National Planning Committee, General education and technical education and developmental research, p. 58, Bombay, Vora, 1948. (Reports of Sub-Committees series.)
10. Ibid., 140.
11. Ibid., 142.
12. Jawaharlal Nehru, *The discovery of India,* p. 416. London, Meridian Books, 1960 (first published in 1946).
13. Mulk Raj Anand, *On education,* p. 20, Bombay, Hind Kitab, 1947.